Review Of Research
Vol. 3 | Issue.6 | March.2014
ISSN:-2249-894X
Available online at www.lbp.world

ORIGINAL ARTICLE

कबीर के काव्य के समाज मे व्याप्त अंधविश्वास

डॉ. राजकुमारी यादव

कबीर दास के समय तत्कालीन समाज की स्थिति बड़ी ही दयनीय थी और समाज में व्याप्त अंधविश्वास, धार्मिक, रीति –रिवाज आदि बातों का बड़ा ही बोलबाला था और कबीर दास ने बड़े ही ध्सानपूर्वक उस समय की स्थिति देखकर आलोचना की परंतु उनका ध्येय आलोचना करना न था बल्कि समाज में व्याप्त बुराईयों को नष्ट करना था। उन्होंने समाज की बुराई भलाई दोनो का निरीक्षण किया। समाज की छोटी से छोटी बुराई भी उनकी दृष्टि से दूर न हो सकी। उसे निकाल फेकने के लिए उन्होंने आलोचना एवं भर्त्सना का मार्ग अपनाया।

कुछ लोग कबीर को ईश्वर भक्त मानते थे इसलिए उन्हें अन्य सूत्रों में खींच लेने का प्रयास करते है यह ठीक है कि ईश्वर –भक्त सर्वत्र ईश्वर की सत्ता का अनुभव करता हुआ सबको समान समझता है वह सबके प्रति प्रेम और दया भाव ईश्वर –प्रेम से भिन्न नहीं समझता किंतु कबीर की स्थिति दूसरी है। वे एक क्रांतिकारी व्यक्तित्व लेकर उत्पन्न हुए थे। सामाजिक रूढ़ियों और विषमताओं ने इनको व्याकूल कर दिया था। वे उनको मिटाकर समाज को एक नया दर्जा देना चाहते थे।

कबीर का 'भक्त' उसी समता की भावना स प्रस्फुटित हुआ। वह उनके व्यक्तित्व के विकास की एक स्थिति है। साधना के पधिक होने के नाते उनका संबध पहले समाज से हुआ, फिर ईश्वर से सामाजिक संवेदना ने उन्हें ईश्वरोन्मुख किया है। क्योंकि समाज को एक सूत्र में बाधने के लिए मातृत्व की भावना भरने के लिए पितृत्व की प्रतिष्ठा भी आवश्यक है।

कबीर की आलोचना साम्य की भावना से प्रादुभूर्त हुई है, किंतु कबीर का साम्यवाद निरीश्वरवादी नहीं है उसमें यांत्रिक जडता नहीं है। उसका धरातल प्रेम और विश्वास है। उसका मूल सत्य और अहिंसा है। उसकी साधना सरल और सुबोध है। अंहकार पाखंड स्वार्थ परता, छल, निंदा, भेद, आदि उसके विरोध भाव है उनमें कबीर का साम्यवाद नहीं पनप सकता। जो सब जीवों में परमात्मा की सत्ता का अनुभव नही करते इनको कबीर भ्रांत मानते है और वे शीघ्र ही कर डालते है।

''यह सब झूठी बंदिगी, बरियां पंच निवाज।
संचे मारे झूठ पढि, काजी करें अकाज ।। १

कबीर के साम्यवाद ने संकीर्णता के सम्प्रदायवाद था बहिष्कार कर दिया है, किंतु धर्म के व्यापक रूप के प्रति उनका आग्रह रहा। वे राम – स्नेही की सच्चा मानव मानते है क्योंकि वही सत्य का वास्तविक रूप समझता है, वही अहिंसा का सम्मान करता है और वही एकता का पूजारी है। इसलिए कबीर ब्राम्हणों से दूर रहकर ईश्वर भक्त के प्रति आकर्षण व्यक्त करते रहे।

''सामंत ब्रंम्हण मति मिले, बैसनो मिलै चंडाल।
अंकमाल दै भेटियें मानों मिले गोपाल।'' २

कबीर का साम्यावाद वह साम्यवाद है जिसमें धर्म है, किंतु व्यापक और उदार ईश्वर है किंतु सर्वव्यापी वह मंदीर मस्जिद औरा गिरीजा की सीमा नहीं है। उसकी साधना में सरलता और कोमलता व लक्ष्य में एकता है जिसकी सत्ता समाज को प्रेम–निधी और व्यक्ति को विभोर कर सकता है। वह एक आदर्श है जिसकी ओर कबीर के प्रयत्न यथार्थ भी प्रेरणा दे रहे है।

इसी साम्य की प्रतिष्ठा के लिए कबीर ने सामाजिक विकृतियों की निंदा की है। वे विकृतियों का विनाश चाहते है, व्यक्तिमात्र की उनसे मुक्ति चाहते है। लौकिक विकृतियों से निकालकर वे मानव को उस स्थिति में देखना चाहते है जिसे लोक –भाषा में साम्य कहते है और जिसे दार्शनिक परिभाषा में आत्म–साक्षात्कार भी कहते है। विकृतियों के निवारण के निमित्त वे भर्त्सना तक का प्रयोग कर ड़ालते है जिससे उनकी वाणी कटु और कर्कश प्रतीत होने लगती है।

तत्कालीन परिस्थितियों से कबीर परिचित थे कि उनका ध्यान हटता ही नहीं था। उन्होंने गोरखनाथ नामदेव और जयदेव का स्मरण लोगों को इसलिए दिलाया कि वे उनके मार्ग का अनुसरण करे अन्यथा कल्पना के भीने आवरण से भूत के स्वर्णलोक की ओर देखने की उन्हें कभी चिंता नहीं हुई। यदि उनका ध्यान कभी उस ओर गया भी तो भक्ति , प्रेम ओर ईश्वरीय न्याय को प्रमाणित करने वाली कथित घटनाओं अथवा अनुभूतियों से प्रेरणा लेकर उन्होंने अपने समय की कुप्रथाओं और रूढियों पर ओर भी अधिक निर्मन आघात किये। एक महान आत्मा को धारण करने के कारण वे विलक्षण भविष्य दृष्टा थे। आदर्श की मधुमयी भूमिका पर वे एक ऐसे समाज की कल्पना करते थे जो सुख–दुख के व्दंदी से परे है, जहाँ व्यक्ति वर्ण ओर जाति के बंधनों से मुक्त है और जहाँ अखंड प्रेम की है अनुभुति शेष है:–

'' कबीर हम बासी उस देश के, जहाँ जाति वरण कुलनाहिं।
शब्द मिलावा होई रहा, देह मिलावा नाहि।।'' ३

सामान्य दृष्टि से उक्त उदाहरण में आध्यात्मिक अनुभूति की विशुध्दता ही दृष्टिगोचर होती है परंतु सुक्ष्म मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण हमें गहराई में जाने को प्रेरित करता है। वस्तुत: वर्तमान जीवन के अभावों ने प्रक्षिप्त होकर कबीर के अंतर में इस निराले भावलोक की सृष्टि की जिसमें शब्द –ब्रम्ह का आनंदमय मिलन है और जहां जड अचेतन की कलई खोल दी गयी है।

कबीर ने वास्तव में रूढ़ियों और आचरणों की आलोचना की है और आलोचना करते समय इन्होंने कुछ को ही अपना लक्ष्य बनाया है। यों तो सामान्य आलोचना के क्षेत्र में प्रत्येक व्यक्ति आ जाता है, किंतु मूर्तिपूजा, तीर्थव्रत, रोजा, नमाज, आदि के संकेतो से वे धर्म व सम्प्रदाय विशेष पर अपने शब्दो के बाण छोड़ते थे। धर्मो के क्षेत्र में भी वे उनके ठेकेदारो तक जा पहुँचते है। पंडित, मुल्ला, साधू, आदि धर्म –प्रतिनिधि है। कबीर इन्ही को संबोधन करके इनके रूढी प्रथाओ की आलोचना करते है। इनके संबोधन व्यंग प्रधान भी है जिनमें ये मधुर चुटकियों भर कर घायल कर देते है। प्राय: कबीर की आलोचना बड़ी तीव्र होती है। वे मर्म वर चोट करते है वे चोट केवल चोट करने के लिए नही करते, अपितु भ्रम एवं मिथ्याचार को दूर करने के लिए करते है। वे धम और कर्म के उस खोखलेपन पर आघात

करते है जिससे कोइ तत्थ नही है। कबीर ने कही – कही पर हिंदू और तुर्क (मुस्लीम) के भेद के विरोध में कुछ पंक्तियां इस प्रकार कही है–

''काजी कौन कतेब बषानै।
पढत–पढत के ते दिन बीते, गति एकै नहीं जानै
सुकति से नेह पकरि करि सुनंति, यहु न बबंदू रे भाई।
ओर खुदाई तुरक मोहि करता, तौ आपै करि किन जाई।
हौ तौ तुरक किया करि सुंनति,ओरति सौ का कहिये।
अरध सरीरी नारि न छुटै, आधा हिन्दू रहिये
छांडि कतेब राम काहि काजी खुन करत हो भारी।
पकरी टेब कबीर भगति की, काजी रहे क्षाव भारी'' ४

इस प्रकार अन्याय और प्राखण्ड के कारण उत्पन्न हुई जीवन की विषमताओ को कबीर ने बड़ी कटु आलोचना की जिसमें कबीर के अंतर की तीव्र व्याकलता फूट पड़ी। अपने समय की जितनी कटु आलोचना और समकालीन बुराईयों पर जितने भीषण प्रहार कबीर ने किये उतने शायद ओर किसी ने नही किये।

कबीर का लक्ष्य आलोचना करना नहीं था, बुराइयों को मिटाना था। वे किसी दाषो को समाज में नही देखना चाहते थे, उससे उन्हें घुटन होने लगी थी उस घुटन को वे सहन नहीं कर सकते थे।

कुछ आलोचको के विचार से कबीर की आलोचना पध्दति में समाज के निर्माण के लिए कोई उपकरण नही है समाज के लिए उनकी वाणी का केवल निषेधात्मक मूल्य है। यह आरोप ठीक नही है। कबीर सहज स्वाभाविक प्रेममय जीवन के प्रचारक थे उंसी मे वे कल्याण देखते थे। यह ठीक है कि एक आदर्श समाज की प्रतिष्ठा करना चाहते थे निर्दोष समाज में ही कबीर के आदर्श समाज की कल्पना निहित थी कबीर के आदर्श में अलौकिक कल्पना नहीं थी।

कबीर ने समाज व्यवस्था और वर्णव्यवस्था की धज्जियाँ उड़ते देखा उसके लिए भी संघर्ष किया इनके कारणों को जानने की कोशिश की और इन सबके पिछे अज्ञानता, मुर्खता, का आलम्बन देखा वे अज्ञान में लिपटे है इसलिए उन्हें सत्य दिखाई नहीं पडता। कबीर ने समाज की सारी कुप्रथाएँ, अंधविश्वास, आदि सभी विचारधारा में उन्होंने बदला व लाया जो आज भी सराहणीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

	किताब का नाम	लेखक	पृष्ठ क्र.
१	कबीर एक विवेचन	डॉ. सरनाम सिंह शर्मा	१५४
२.	कबीर एक विवेचन	डॉ. सरनाम सिंह शर्मा	१५४
३.	कबीर एक विवेचन	डॉ. सरनाम सिंह शर्मा	१५४
४.	कबीर ग्रंथावली	डॉ. श्यामसुदर दास	पद क्र. ५९ पृष्ठ – १०१